# अन्तकृद्दशासूत्र का समीक्षात्मक अध्ययन

●श्री ज्ञानमल कुदाल

अंतगडदसा सूत्र के आठ वर्गों के ९० अध्ययनों में मुमुक्षुओं के वैराग्य, प्रव्रज्या, अध्ययन, साधना एवं सिद्धि का तो वर्णन है ही, किन्तु इसमें वासुदेव श्रीकृष्ण, भ. अरिष्टनेमि, तीर्थंकर महावीर, गणधर गौतम आदि के जीवन संबंधी घटनाएँ भी उपलब्ध हैं। अध्यवसायी विद्वान् श्री कुदाल ने अंतगडदसा सूत्र के नामकरण, रचनाकाल, भाषाशैली, विषयवस्तु एवं सूत्र की विशेषताओं पर अच्छा प्रकाश डाला है। -**सम्पादक**

प्रत्येक धर्म-परम्परा में धर्म ग्रंथों का आदरणीय स्थान होता है। जैन परम्परा में आगम-साहित्य को प्रामाणिक एवं आधारभूत ग्रंथ माना गया है। जैन आगम-साहित्य अंग, उपांग, छेद, मूल, प्रकीर्णक आदि वर्गों में विभाजित है। यह विभागीकरण हमें सर्वप्रथम विधिमार्गप्रपा (आचार्य जिनप्रभ १३वीं शताब्दी) में प्राप्त होता है।[१]

अन्य आगमों के वर्गीकरण में 'अंतकृद्दशांग' का उल्लेख अंग प्रविष्ट आगमों में आठवें स्थान पर हुआ है। आगम-साहित्य में साधु-साध्वियों के अध्ययन—विषयक जितने उल्लेख प्राप्त होते हैं, वे सब अंगों और पूर्वों से संबंधित हैं और वे सब हमें 'अन्तकृद्दशांग' में भी प्राप्त होते हैं, जैसे—

**(क) सामायिक आदि ग्यारह अंगों को पढने वाले**—

१. अन्तगड़, प्रथम वर्ग में भ. अरिष्टनेमि के शिष्य गौतम के विषय में प्राप्त होता है—

**"सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ"**

२. अन्तगड, पंचम वर्ग, प्रथम अध्ययन में भ. अरिष्टनेमि की शिष्या पद्मावती के विषय में प्राप्त होता है—

**"सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ"**

३. अन्तगड, अष्टम वर्ग, प्रथम अध्ययन में भगवान महावीर की शिष्या काली के विषय में प्राप्त होता है—

**"सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ"**

४. अन्तगड, षष्ठ वर्ग, १५वें अध्ययन में भगवान महावीर के शिष्य अतिमुक्त कुमार के विषय में प्राप्त होता है—

**"सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ"**

**(ख) बारह अंगों को पढ़ने वाले**— अन्तगड, चतुर्थ वर्ग, प्रथम अध्ययन में भगवान अरिष्टनेमि के शिष्य जालिकुमार के विषय में प्राप्त होता है—

**"बारसंगी"**

**(ग) चौदह पूर्वों को पढने वाले**—

१. अन्तगड, तृतीय वर्ग, नवम अध्ययन में भगवान अरिष्टनेमि के शिष्य सुमुखकुमार के विषय में प्राप्त होता है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ"

२. अन्तगड, तृतीय वर्ग, प्रथम अध्ययन में भ. अरिष्टनेमि के शिष्य अणीयसकुमार के विषय में प्राप्त होता है—

**"सामाइयमाइयाइं चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ"**

## नामकरण

**'अंतकृद्दशासूत्र'** में जन्म-मरण की परम्परा का अन्त करने वाली पवित्र आत्माओं का वर्णन होने से और इसके दस अध्ययन होने से इसका नाम "अन्तकृत्दशा" है। इस सूत्र के नामकरण के बारे में हमें विभिन्न प्रकार के उल्लेख प्राप्त होते हैं। "समवायांग" में इस सूत्र के दस अध्ययन और सात वर्ग बताये हैं।[२] आचार्य देववाचक ने नन्दीसूत्र में आठ वर्गों का उल्लेख किया है, दस अध्ययनों का नहीं।[३] आचार्य अभयदेव ने समवायांग वृत्ति में दोनों ही उपर्युक्त आगमों के कथन में सामंजस्य बिठाने का प्रयास करते हुए लिखा है कि प्रथम वर्ग में दस अध्ययन हैं, इस दृष्टि से समवायांग सूत्र में दस अध्ययन और अन्य वर्गों की अपेक्षा से सात वर्ग कहे हैं। नन्दीसूत्रकार ने अध्ययनों का कोई उल्लेख न कर केवल आठ वर्ग बतलाये हैं।[४] यहाँ प्रश्न यह उठाया जा सकता है कि प्रस्तुत सामंजस्य का निर्वाह अन्त तक किस प्रकार हो सकता है? क्योंकि समवायांग में ही अन्तकृद्दशा के शिक्षाकाल दस कहे गये हैं जबकि नन्दीसूत्र में उनकी संख्या आठ बताई है। आचार्य अभयदेव ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि हमें उद्देशनकालों के अन्तर का अभिप्राय ज्ञात नहीं है।[५] आचार्य जिनदासगणी महत्तर ने नन्दीसूत्र चूर्णि[६] में और आचार्य हरिभद्र ने नन्दीवृत्ति[७] में लिखा है कि प्रथम वर्ग के दस अध्ययन होने से इनका नाम **"अन्तगडदसाओ"** है। नन्दीचूर्णीकार ने 'दशा' का अर्थ अवस्था किया है।[८] यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि समवायांग में दस अध्ययनों का निर्देश तो है, किन्तु उन अध्ययनों के नामों का संकेत नहीं है। स्थानांगसूत्र में अध्ययनों के नाम इस प्रकार बतलाये हैं— नमि, मातंग, सोमिल, रामगुप्त, सुदर्शन, जमालि, भगालि, किंकष, चिल्वक्क, फाल और अंबडपुत्र।[९]

अकलंक ने राजवार्तिक[१०] और शुभचन्द्र ने अंगपण्णत्ति[११] में कुछ पाठभेदों के साथ दस नाम दिये हैं— नमि, मातंग, सोमिल, रामगुप्त, सुदर्शन, यमलोक, वलीक, कंबल, पाल और अंबष्टपुत्र। इसमें यह भी लिखा है कि प्रस्तुत आगम में प्रत्येक तीर्थंकर के समय में होने वाले दस–दस अन्तकृत केवलियों का वर्णन है। इसका समर्थन वीरसेन और जयसेन जो जयधवलाकार हैं ने भी किया है।[१२] नन्दीसूत्र में न तो दस अध्ययनों का उल्लेख है और न उनके नामों का निर्देश है। समवायांग और तत्त्वार्थराजवार्तिक में जिन अध्ययनों के नामों का निर्देश है वे अध्ययन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान में उपलब्ध अन्तकृद्दशांग में नहीं हैं। नन्दीसूत्र में वही वर्णन है जो वर्तमान में अंतकृद्दशा में उपलब्ध है। इससे यह फलित होता है कि वर्तमान में अन्तकृद्दशा का जो रूप प्राप्त है वह आचार्य देववाचक के समय के पूर्व का है। वर्तमान में अन्तकृद्दशा में आठ वर्ग हैं और प्रथम वर्ग के दस अध्ययन हैं किन्तु जो नाम, स्थानांग, तत्त्वार्थराजवार्तिक व अंगपण्णति में आये हैं, उनसे पृथक् हैं। जैसे गौतम, समुद्र, सागर, गंभीर, स्तिमित, अचल, कांपिल्य, अक्षोभ, प्रसेनजित और विष्णु। आचार्य अभयदेव ने स्थानांग वृत्ति में इसे वाचनान्तर कहा है।[१३] इससे यह स्पष्ट परिज्ञात होता है कि वर्तमान में उपलब्ध अन्तकृद्दशा समवायांग में वर्णित वाचना से अलग है। कितने ही विद्वानों ने यह भी कल्पना की है कि पहले इस आगम में उपासकदशा की तरह दस ही अध्ययन होंगे, जिस तरह उपासकदशा में दस श्रमणोपासकों का वर्णन है, इसी तरह प्रस्तुत आगम में भी दस अर्हतों की कथाएँ आई होंगी।[१४]

उपर्युक्त वर्णन से हम यह कह सकते हैं कि अन्तकृद्दशा में उन नब्बे महापुरुषों का जीवनवृत्तान्त संगृहीत है, जिन्होंने संयम एवं तप-साधना द्वारा सम्पूर्ण कर्मों पर विजय प्राप्त करके जीवन के अन्तिम क्षणों में मोक्ष-पद की प्राप्ति की। इस प्रकार जीवन-मरण के चक्र का अन्त कर देने वाले महापुरुषों के जीवनवृत्त के वर्णन को ही प्रधानता देने के कारण इस शास्त्र के नाम का प्रथम अवयव ''अन्तकृत्'' है। नाम का दूसरा अवयव 'दशा' शब्द है। दशा शब्द के दो अर्थ हैं–

१. जीवन की भोगावस्था से योगावस्था की ओर गमन 'दशा' कहलाता है, दूसरे शब्दों में शुद्ध अवस्था की ओर निरन्तर प्रगति ही 'दशा' है।

२. जिस आगम में दस अध्ययन हों उस आगम को भी 'दशा' कहा गया है। प्रस्तुत सूत्र में प्रत्येक अन्तकृत् साधक निरन्तर शुद्धावस्था की ओर गमन करता है, अतः इस ग्रन्थ में अन्तकृत् साधकों की दशा के वर्णन को ही प्रधानता देने से ''अन्तकृद्दशा'' कहा गया है।

## अन्तकृतदशा सूत्र के कर्ता एवं रचनाकाल

अंग आगमों के उद्गाता स्वयं तीर्थंकर और सूत्रबद्ध रचना करने वाले गणधर हैं। अंगबाह्य आगमों के मूल आधार तीर्थंकर और उन्हें सूत्र रूप में रचने वाले हैं- चतुर्दश पूर्वी, दशपूर्वी और प्रत्येक बुद्ध आचार्य।[१५] मूलाचार में आचार्य वट्टकेर ने गणधर कथित, प्रत्येक बुद्ध कथित और अभिन्नदशपूर्वी कथित सूत्रों को प्रमाणभूत माना है।[१६]

इस प्रकार अंगप्रविष्ट साहित्य के उद्गाता भगवान महावीर हैं और इनके रचयिता गणधर सुधर्मास्वामी। अंगबाह्य साहित्य में कर्तृत्व की दृष्टि से अनेक आगम स्थविरों द्वारा रचित हैं और अनेक द्वादशांगों से उद्धृत हैं। वर्तमान में जो अंगसाहित्य उपलब्ध है वह भगवान महावीर के समकालीन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गणधर सुधर्मा की रचना है इसलिए अंग-साहित्य का रचनाकाल ई. पू. छठी शताब्दी सिद्ध होता है। अंगबाह्य की रचना एक व्यक्ति की नहीं, अतः उन सभी का एक समय नहीं हो सकता। प्रज्ञापना सूत्र के रचयिता श्यामाचार्य हैं तो दशवैकालिक सूत्र के रचयिता आचार्य शय्यंभव हैं। नन्दीसूत्र के रचयिता देववचाक हैं तो दशा, कल्प और व्यवहार सूत्र के कर्ता चतुर्दशपूर्वी भद्रबाहु। कुछ विद्वान् आगमों का रचनाकाल वीर निर्वाण के पश्चात् ९८० अथवा ९९३वाँ वर्ष जो देवर्द्धिगणीक्षमाश्रमण का है, मानते हैं उनका यह समय मानना युक्तिसंगत नहीं हैं, क्योंकि देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण ने तो आगमों को इस काल में लिपिबद्ध किया था, किन्तु आगम तो प्राचीन ही हैं पहले आगम साहित्य को लिखने का निषेध था, उसे कण्ठस्थ रूप में रखने की परम्परा थी।[१७] लगभग एक हजारवर्ष तक वह कण्ठस्थ रहा जिससे श्रुतवचनों में कुछ परिवर्तन होना स्वाभाविक था, परन्तु देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण ने इसे पुस्तकारूढ़ कर इनका ह्रास होने से बचा लिया।[१८] इसके बाद कुछ अपवादों को छोड़कर श्रुत साहित्य में परिवर्तन नहीं हुआ। कुछ स्थलों पर थोड़ा बहुत पाठ प्रक्षिप्त व परिवर्तन हुआ हो, किन्तु आगमों की प्रामाणिकता में कोई अन्तर नहीं आया।

## अन्तकृद्दशांग की भाषा शैली

जिस प्रकार वेद छान्दस भाषा में, बौद्धपिटक पालि भाषा में निबद्ध हैं, उसी प्रकार जैन आगमों की भाषा अर्धमागधी प्राकृत है। समवायांग सूत्र मे लिखा है कि भगवान अर्द्धमागधी भाषा में धर्म का व्याख्यान करते हैं भगवान द्वारा भाषित अर्द्धमागधी आर्य, अनार्य, द्विपद, चतुष्पद, मृग, पशु, पक्षी आदि सभी की भाषा में परिणत हो जाती है— उनके लिए हितकर, कल्याणकर तथा सुखकर होती है।[१९] आचारांगचूर्णि में भी इसी आशय का उल्लेख है। दशवैकालिक वृत्ति में भी इसी प्रकार के आशय एवं भाव व्यक्त किये गये हैं— चारित्र की कामना करने वाले बालक, स्त्री, वृद्ध, मूर्ख अनपढ़ सभी लोगों पर अनुग्रह करने के लिए तत्त्वद्रष्टाओं ने सिद्धान्त की रचना प्राकृत में की।[२०] प्रस्तुत आगम की भाषा अर्द्धमागधी है।

'अन्तकृद्दशासूत्र' की रचना कथात्मक शैली में की गई है। इस शैली को '**कथानुयोग**' कहा जाता है। इस शैली में '**तेणं कालेणं तेण समएणं**' से कथा का प्रारम्भ किया जाता है। आगमों में ज्ञाताधर्मकथा, उपासकदशांग, अनुत्तरौपपातिक, विपाक सूत्र और अन्तकृद्दशांग सूत्र इसी शैली में निबद्ध किया गया है। इस आगम में प्रायः स्वरान्तरूप ग्रहण करने की शैली को ही अपनाया गया है जैसे— परिवसति, परिवसइ, रायवण्णतो, रायवण्णओ, एकवीसाते, एगवीसाए आदि। इस आगम में प्रायः संक्षिप्तीकरण की शैली को अपनाते हुए शब्दान्त में बिन्दुयोजना द्वारा, अंक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योजना द्वारा अवशिष्ट पाठ को व्यक्त करने की प्राचीन शैली अपनाई है। इस सूत्र में अनेक स्थानों पर तप का वर्णन प्राप्त होता है, इसके अष्टम वर्ग में विशेष रूप से तप के स्वरूप एवं पद्धतियों का विवेचन किया गया है, जिनके अनेकविध स्थापनायन्त्र प्राप्त होते हैं।

## विषयवस्तु

अन्तकृद्दशांग सूत्र में उन स्त्री—पुरुषों के आख्यान हैं, जिन्होंने अपने कर्मों का अन्त करके मोक्ष प्राप्त किया है। इसमें ९०० श्लोक(प्रमाण), ८ वर्ग और ९ अध्ययन हैं। ये आठ वर्ग क्रमशः १०,८,१३,१०,१०,१६,१३ और १० अध्ययनों में विभक्त हैं। प्रत्येक अध्ययन में किसी न किसी व्यक्ति का नाम अवश्य आता है, किन्तु कथानक अपूर्ण है। अधिकांश वर्णनों को अन्य स्थान से पूर्ण कर लेने की सूचना कर दी गई है। 'वण्णओ' की परम्परा द्वारा कथानकों को अन्यत्र से पूरा कर लेने को कहा गया है। प्रथम अध्ययन में गौतम का कथानक द्वारवती नगरी के राजा अन्धकवृष्णि की रानी धारिणी देवी की सुप्तावस्था तक वर्णन कर कह दिया गया है और बताया गया है कि स्वप्नदर्शन, कुमारजन्म, उसका बालकपन, विद्याग्रहण, यौवन, पाणिग्रहण, विवाह, प्रसाद एवं भोगों का वर्णन महाबल की कथा के समान चित्रित है। आगे वाले प्रायः सभी अध्ययनों में नायक—नायिका मात्र का नाम निर्देश कर वर्णन अन्यत्र से अवगत कर लेने की सूचना दी गई है। इस आगम के आख्यानों को दो भागों में विभक्त किया गया है। प्रथम पाँच वर्गों के कथानकों का संबंध अरिष्टनेमि के साथ है और शेष तीन वर्ग के कथानकों का संबंध भ. महावीर तथा श्रेणिक के साथ है। इस आगम में मूलतः दस अध्ययन रहे होंगे, उत्तरकाल में इसको विकसित कर यह रूप हुआ है।[२१]

प्रथम वर्ग से लेकर पाँचवें वर्ग में श्रीकृष्ण वासुदेव का वर्णन आया है। मधुकरमुनि द्वारा संपादित अन्तकृद्दशा सूत्र की भूमिका में श्रीकृष्ण वासुदेव की प्रामाणिकता के बारे में विस्तृत वर्णन किया गया है उनके अनुसार श्रीकृष्ण वासुदेव जैन, बौद्ध और वैदिक परम्परा में अत्यधिक चर्चित रहे हैं। वैदिक परम्परा के ग्रन्थों में वासुदेव, विष्णु, नारायण, गोविन्द प्रभृति उनके अनेक नाम प्रचलित हैं। श्रीकृष्ण, वसुदेव के पुत्र थे, इसलिए वे वासुदेव कहलाये। महाभारत शान्तिपर्व में कृष्ण को विष्णु का रूप बताया है।[२२] गीता में श्रीकृष्ण, विष्णु के अवतार हैं।[२३] महाभारतकार ने उन्हें नारायण मानकर स्तुति की है। वहाँ उनके दिव्य और भव्य मानवीय स्वरूप के दर्शन होते हैं।[२४] शतपथब्राह्मण में उनके नारायण नाम का उल्लेख हुआ है।[२५] तैतरीयारण्यक में उन्हें सर्वगुणसम्पन्न कहा है।[२६] महाभारत के नारायणीय उपाख्यान में नारायण को सर्वेश्वर का रूप दिया है। मार्कण्डेय ने युधिष्ठिर को यह बताया है कि जनार्दन ही स्वयं नारायण हैं। महाभारत में अनेक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थलों पर उनके नारायण रूप का निर्देश है।[27] पद्मपुराण, वायुपुराण, वामनपुराण, कर्मपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण, हरिवंशपुराण और श्रीमद्भागवत में विस्तार से श्रीकृष्ण का चरित्र वर्णित है।

छान्दोग्य उपनिषद् में कृष्ण को देवकी का पुत्र कहा है। वे घोर अंगिरस ऋषि[28] के निकट अध्ययन करते है। श्रीमद्भागवत में कृष्ण को परब्रह्म बताया है।[29] वे ज्ञान,शान्ति, बल, ऐश्वर्य, वीर्य और तेज इन छह गुणों में विशिष्ट हैं। उनके जीवन के विविध रूपों का चित्रण साहित्य में हुआ है। वैदिक परम्परा के आचार्यों ने अपनी दृष्टि से श्रीकृष्ण के चरित्र को चित्रित किया है। जयदेव विद्यापति आदि ने कृष्ण के प्रेमी रूप को ग्रहण कर कृष्णभक्ति का प्रादुर्भाव किया। सूरदास आदि कवियों ने कृष्ण की बाल लीला और यौवन-लीला का विस्तार से विश्लेषण किया। रीतिकाल के कवियों के आराध्य देव श्रीकृष्ण रहे और उन्होंने गीतिकाएँ व मुक्तकों के रूप में पर्याप्त साहित्य का सृजन किया। आधुनिक युग में भी वैदिक परम्परा के विज्ञों ने प्रिय-प्रवास, कृष्णावतार आदि अनेक ग्रन्थ लिखे हैं।[30]

बौद्ध साहित्य के घटजातक[31] में श्रीकृष्ण चरित्र का वर्णन आया है। यद्यपि घटनाक्रम में व नामों में पर्याप्त अन्तर है, तथापि कृष्ण कथा का हार्द एक सदृश है।

जैन परम्परा में श्रीकृष्ण सर्वगुणसम्पन्न, श्रेष्ठ चरित्रनिष्ठ, अत्यन्त दयालु, शरणागतवत्सल, धीर, विनयी, मातृभक्त, महान् वीर, धर्मात्मा, कर्तव्यपरायण, बुद्धिमान, नीतिमान और तेजस्वी व्यक्तित्व के धनी हैं। समवायांग[32] में उनके तेजस्वी व्यक्तित्व का जो चित्रण है, वह अद्भुत है, वे त्रिखण्ड के अधिपति अर्धचक्री हैं। उनके शरीर पर एक सौ आठ प्रशस्त चिह्न थे। वे नरवृषभ और देवराज इन्द्र के सदृश थे, महान योद्धा थे। उन्होंने अपने जीवन में तीन सौ साठ युद्ध किये, किन्तु किसी भी युद्ध में वे पराजित नहीं हुए। उनमें बीस लाख अष्टपदों की शक्ति थी[33], किन्तु उन्होंने अपनी शक्ति का कभी दुरुपयोग नहीं किया। वैदिक परम्परा की भाँति जैन परम्परा ने वासुदेव श्रीकृष्ण को ईश्वर का अंश या अवतार नहीं माना है। वे श्रेष्ठतम शासक थे। भौतिक दृष्टि से वे उस युग के सर्वश्रेष्ठ अधिनायक थे, किन्तु निदानकृत होने से वे आध्यात्मिक दृष्टि से चतुर्थ गुणस्थान से आगे विकास न कर सके। वे तीर्थंकर अरिष्टनेमि के परम भक्त थे। अरिष्टनेमि से श्रीकृष्ण वय की दृष्टि से ज्येष्ठ थे तो आध्यात्मिक दृष्टि से अरिष्टनेमि ज्येष्ठ थे।[34] एक धर्मवीर थे तो दूसरे कर्मवीर थे, एक निवृत्तिप्रधान थे तो दूसरे प्रवृत्तिप्रधान थे। अतः जब भी अरिष्टनेमि द्वारिका में पधारते तब श्रीकृष्ण उनकी उपासना के लिए पहुंचते थे। अन्तकृद्दशा, समवायांग, ज्ञाताधर्मकथा, स्थानांग,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निरयावलिका, प्रश्नव्याकरण, उत्तराध्ययन प्रभृति आगमों में उनका यशस्वी व तेजस्वी व्यक्तित्व उजागर हुआ है। आगमिक व्याख्या-साहित्य में निर्युक्ति, चूर्णि, भाष्य और टीका ग्रंथों में उनके जीवन से संबंधित अनेक घटनाएँ हैं। श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही परम्पराओं के मूर्धन्य मनीषियों ने कृष्ण के जीवन्त प्रसंगों को लेकर शताधिक ग्रंथों की रचनाएँ की हैं। भाषा की दृष्टि से वे रचनाएँ प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत, पुरानी गुजराती, राजस्थानी व हिन्दी भाषा में हैं।

प्रस्तुत आगम में श्रीकृष्ण का चहुँमुखी व्यक्तित्व निहारा जा सकता है। वे तीन खण्ड के अधिपति होने पर भी माता-पिता के परमभक्त हैं। माता देवकी की अभिलाषापूर्ति के लिए वे हरिणगमेषी देव की आराधना करते हैं। भाई के प्रति भी उनका अत्यन्त स्नेह है। भगवान अरिष्टनेमि के प्रति भी अत्यन्त निष्ठावान हैं। जहाँ एक ओर वे रणक्षेत्र में असाधारण वीरता का परिचय देकर रिपुमर्दन करते हैं, वज्र से भी कठोर प्रतीत होते हैं, वहीं दूसरी ओर एक वृद्ध व्यक्ति को देखकर उनका हृदय अनुकम्पा से द्रवित हो जाता है और उसके सहयोग के लिए स्वयं भी ईंट उठा लेते हैं। द्वारिका विनाश की बात सुनकर वे सभी को यह प्रेरणा प्रदान करते हैं कि भगवान् अरिष्टनेमि के पास प्रव्रज्या ग्रहण करो। दीक्षितों के परिवार के पालन-पोषण आदि की व्यवस्था मैं करूँगा। स्वयं की महारानियाँ, पुत्र–पुत्रियाँ और पौत्र जो भी प्रव्रज्या के लिए तैयार होते हैं उन्हें वे सहर्ष अनुमति देते हैं। आवश्यकचूर्णि में वर्णन है कि वे पूर्णरूप से गुणानुरागी थे। कुत्ते के शरीर में कुलबुलाते हुये कीड़ों की ओर दृष्टि न डालकर उसके चमचमाते हुए दांतों की प्रशंसा की, जो उनके गुणानुराग का स्पष्ट प्रतीक है।

प्रस्तुत आगम के पाँच वर्ग तक भगवान् अरिष्टनेमि के पास प्रव्रजित होने वाले साधकों का उल्लेख है। भगवान अरिष्टनेमि बाईसवें तीर्थंकर हैं। यद्यपि आधुनिक इतिहासकार उन्हें निश्चित तौर पर ऐतिहासिक पुरुष नहीं मानते हैं, किन्तु उनकी ऐतिहासिकता असंदिग्ध है। जब उस युग में होने वाले श्रीकृष्ण को ऐतिहासिक पुरुष माना जाता है तो उन्हें भी ऐतिहासिक पुरुष मानने में संकोच नहीं होना चाहिए।

जैन परम्परा में ही नहीं, वैदिक परम्परा में भी अरिष्टनेमि का उल्लेख अनेक स्थलों पर हुआ है। ऋग्वेद में अरिष्टनेमि शब्द चार बार आया है।[35] "**स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः**"।[36] यहाँ पर अरिष्टनेमि शब्द भगवान अरिष्टनेमि के लिए ही आया है। इसके अतिरक्त भी ऋग्वेद के अन्य स्थलों पर '**तार्क्ष्य अरिष्टनेमि**' का वर्णन है। यजुर्वेद[37] और सामवेद[38] में भी भगवान अरिष्टनेमि को तार्क्ष्य अरिष्टनेमि लिखा है जो भगवान का ही नाम होना चाहिए। उन्होंने राजा सगर को मोक्षमार्ग का जो उपदेश दिया[39], वह जैनधर्म

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के मोक्ष मन्तव्यों से अत्यधिक मिलता-जुलता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह स्पष्ट है कि सगर के समय में वैदिक लोग मोक्ष में विश्वास नहीं करते थे।[६०] अतः यह उपदेश किसी श्रमण संस्कृति के ऋषि का ही होना चाहिए। यजुर्वेद में एक स्थान पर अरिष्टनेमि का वर्णन इस प्रकार है— अध्यात्म यज्ञ को प्रकट करने वाले, संसार के सभी भव्य जीवों को यथार्थ उपदेश देने वाले, जिनके उपदेश से जीवों की आत्मा बलवान होती है, उन सर्वज्ञ नेमिनाथ के लिए आहुति समर्पित करता हूँ।[६१] डॉ. राधाकृष्णन ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि यजुर्वेद में ऋषभदेव, अजितनाथ और अरिष्टनेमि इन तीन तीर्थंकरों का उल्लेख पाया जाता है।[६२]

स्कन्दपुराण के प्रभास खण्ड में एक वर्णन है— अपने जन्म के पिछले भाग में वामन ने तप किया। उस तप के प्रभाव से शिव ने वामन को दर्शन दिये। वे शिव, श्यामवर्ण, अचेल तथा पद्मासन में स्थित थे। वामन ने उनका नाम नेमिनाथ रखा। नेमिनाथ इस घोरकलिकाल में सब पापों का नाश करने वाले हैं। उनके दर्शन और स्पर्श से करोड़ों यज्ञों का फल प्राप्त होता है।[६३]

प्रभासपुराण[६४] में भी अरिष्टनेमि की स्तुति की गई है। महाभारत अनुशासन पर्व में **"शूरः शौरिर्जिनेश्वर"** पद आया है। विद्वानों ने "शूरः शौरिर्जिनेश्वरः" मानकर उसका अर्थ अरिष्टनेमि किया है।[६५]

लंकावतार के तृतीय परिवर्त में तथागत बुद्ध के नामों की सूची दी गई है। उनमें एक नाम "अरिष्टनेमि" है।[६६] संभव है अहिंसा के दिव्य आलोक को जगमगाने के कारण अरिष्टनेमि अत्यधिक लोकप्रिय हो गये थे जिसके कारण उनका नाम बुद्ध की नाम-सूची में भी आया है। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. राय चौधरी ने अपनी कृति वैष्णव परम्परा के प्राचीन इतिहास में श्रीकृष्ण को अरिष्टनेमि का चचेरा भाई बतलाया है। कर्नल टॉड[६७] ने अरिष्टनेमि के संबंध में लिखा है कि मुझे ज्ञात होता है कि प्राचीनकाल में चार मेधावी महापुरुष हुए हैं, उनमें एक आदिनाथ हैं, दूसरे नेमिनाथ हैं, नेमिनाथ ही स्केन्डीनेविया निवासियों के प्रथम ओदिन तथा चीनियों के प्रथम 'फो' देवता थे। प्रसिद्ध कोषकार डॉ. नगेन्द्रनाथ वसु, पुरातत्त्ववेत्ता डॉक्टर फुहरर, प्रो. वारनेट, मिस्टर करवा, डॉ. हरिदत्त, डॉ० प्राणनाथ विद्यालंकार प्रभृति अनेक विद्वानों का स्पष्ट मन्तव्य है कि भगवान् अरिष्टनेमि एक प्रभावशाली पुरुष थे। उन्हें ऐतिहासिक पुरुष मानने में कोई बाधा नहीं है।

छान्दोग्योपनिषद् में भगवान् अरिष्टनेमि का नाम "घोर अंगिरस ऋषि' आया है, जिन्होंने श्री कृष्ण को आत्मयज्ञ की शिक्षा प्रदान की थी। धर्मानन्द कौशाम्बी का मानना है कि आंगिरस भगवान् अरिष्टनेमि का ही नाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था।[४४] आंगिरस ऋषि ने श्रीकृष्ण से कहा— श्रीकृष्ण जब मानव का अन्त समय सन्निकट आये उस समय उसको तीन बातों का स्मरण करना चाहिये।

१. त्वं अक्षतमसि—तू अविनश्वर है।

२. त्वं अच्युतमसि तू अच्युत है।

३. त्वं प्राणसंशितमसि—तू प्राणियों का जीवनदाता है।[४५]

प्रस्तुत उपदेश को श्रवणकर श्रीकृष्ण अपिपास हो गये। वे अपने आपको धन्य अनुभव करने लगे। प्रस्तुत कथन की तुलना अन्तकृद्दशा में आये हुए भगवान अरिष्टनेमि के इस कथन से कर सकते हैं कि जब भगवान के मुँह से द्वारिका का विनाश और जराकुमार के हाथ से स्वयं अपनी मृत्यु की बात सुनकर श्रीकृष्ण का मुखकमल मुरझा जाता है, तब भगवान कहते हैं— हे श्रीकृष्ण! तुम चिन्ता न करो। आगामी भव में तुम अमम नामक तीर्थंकर बनोगे।[४६] यह सुनकर श्रीकृष्ण संतुष्ट एवं खेदरहित हो गये।

प्रस्तुत आगम में श्रीकृष्ण के छोटे भाई गजसुकुमार का प्रसंग अत्यन्त प्रेरणास्पद एवं रोचक है। वे भगवान् अरिष्टनेमि के उपदेश से इतने प्रभावित हुए कि सब कुछ छोड़कर श्रमण बन जाते हैं और महाकाल नामक श्मशान में जाकर भिक्षु महाप्रतिमा को स्वीकार कर ध्यान में लीन हो जाते हैं। इधर सोमिल नामक ब्राह्मण देखता है कि मेरा होने वाला जामाता श्रमण बन गया है तो उसे अत्यन्त क्रोध आता है और सोचता है कि इसने मेरी बेटी के जीवन से खिलवाड़ किया है, क्रोध से उसका विवेक क्षीण हो जाता है। उसने गजसुकुमार मुनि के सिर पर मिट्टी की पाल बांधकर धधकते अंगार रख दिये। उनके मस्तक, चमड़ी, मज्जा, मांस आदि के जलने से महाभयंकर वेदना होती है फिर भी वे ध्यान से विचलित नहीं होते हैं। उनके मन में जरा भी विरोध एवं प्रतिशोध की भावना पैदा नहीं हुई। यह थी रोष पर तोष की विजय। दानवता पर मानवता की विजय, जिसके फलस्वरूप उन्होंने केवल एक ही दिन में अपनी चारित्र पर्याय के द्वारा मोक्ष को प्राप्त किया।

चतुर्थ वर्ग के दस अध्ययनों में उन दस राजकुमारों का वर्णन हैं जिन्होंने राज्य के सम्पूर्ण वैभव व ठाट-बाट को छोड़कर भगवान अरिष्टनेमि के पास उग्र तपश्चर्या कर केवलज्ञान को प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त किया। इस वर्ग में निम्न दस राजकुमारों का वर्णन है—

| नाम | पिता | माता |
|---|---|---|
| १. जालि कुमार | म. वसुदेव | रानी धारिणी |
| २. मयालि कुमार | म. वसुदेव | रानी धारिणी |
| ३. उवयालि कुमार | म. वसुदेव | रानी धारिणी |
| ४. पुरु षसेन कुमार | म. वसुदेव | रानी धारिणी |
| ५. वारिषेण कुमार | म. वासुदेव | रानी धारिणी |

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

| | | |
|---|---|---|
| ६. प्रद्युम्न कुमार | श्रीकृष्ण वासुदेव | रानी रूक्मिणी |
| ७. शाम्ब कुमार | श्रीकृष्ण वासुदेव | रानी जाम्बवती |
| ८. अनिरुद्ध कुमार | प्रद्युम्न कुमार | रानी वैदर्भी |
| ९. सत्यनेमि कुमार | म. समुद्र विजय | रानी शिवा |
| १०. दृढनेमि कुमार | म.समुद्र विजय | रानी शिवा |

इस वर्ग में वर्णन आया है कि इन सभी राजकुमारों का जीवन गौतम कुमार की तरह था। इन सभी ने पचास–पचास कन्याओं के साथ विवाह किया था। बारह वर्ष तक अंगों का अध्ययन कर सोलह वर्ष तक संयम का पालन किया और अन्त में शत्रुंजय पर्वत पर मुक्त अवस्था प्राप्त की।

पाँचवें वर्ग के दस अध्ययनों में श्रीकृष्ण वासुदेव की आठ रानियों तथा दो पुत्रवधुओं के वैराग्यमय जीवन का वर्णन है। श्रीकृष्ण की रानियों में पद्मावती, गौरी, गान्धारी, लक्ष्मणा, सुसीमा, जाम्बवती, सत्यभामा तथा रूक्मिणी देवी और पुत्रवधुओं में मूलश्री एवं मूलदत्ता देवी है। राज्य वैभव को त्यागकर वैराग्य मार्ग को अपनाने में राजरानियाँ भी किसी से कम नहीं हैं। यह अपूर्व उदाहरण है। इसी वर्ग में भगवान अरिष्टनेमि ने श्रीकृष्ण को कहा था कि वे आने वाली चौबीसी में जम्बूद्वीप के अन्तर्गत भारतवर्ष के पुण्ड्रदेश के शतद्वार नामक नगर में अमम नामक बारहवें तीर्थंकर बनेंगे। इस वर्ग का एक और प्रसंग महत्त्वपूर्ण है जिसमें भगवान अरिष्टनेमि द्वारा द्वारिका के विनाश का कारण बताया गया– सुरापान के कारण यदुवंशी युवक द्वैपायन ऋषि का अपमान करेंगे और द्वैपायन ऋषि अग्निकुमार देव बनकर द्वारिका नगरी का विनाश करेंगे।

छठे वर्ग में सोलह अध्ययन हैं। प्रथम और द्वितीय अध्ययन में मंकाई और किंकम गाथापति, तृतीय अध्ययन में अर्जुनमाली, चतुर्थ अध्ययन से चौदहवें अध्ययन में काश्यप, क्षेमक, धृतिधर, कैलाश, हरिचन्दन, वारदतक, सुदर्शन ,पूर्णभद्र, सुमनभद्र, सुप्रतिष्ठित और मेघकुमार मुनि, पन्द्रहवें अध्ययन में अतिमुक्त कुमार और सोलहवें अध्ययन में अलक्ष नरेश का वर्णन आया है। मंकाई तथा किंकम ने सोलह वर्ष तक गुणरत्न संवत्सर तप की आराधना कर विपुलगिरि पर्वत पर सिद्धावस्था प्राप्त की। इसके तृतीय अध्ययन में अर्जुनमाली और उसकी पत्नी बन्धुमती का मार्मिक वर्णन प्राप्त होता है जो मुद्गरपाणि नामक यक्ष की उपासना करते थे। ललित गोष्ठी के छह सदस्यों द्वारा बन्धुमती के चरित्र हरण करने पर अर्जुनमाली को क्रोध आता है और मुद्गरपाणि यक्ष के सहयोग से उन छहों सदस्यों को मार देता है। भगवान महावीर के राजगृह नगर में आगमन पर सुदर्शन नामक श्रेष्ठी उनके दर्शनार्थ जाते हैं। सुदर्शन पर भी वह क्रोधित होता है, परन्तु सुदर्शन अपने जीवन को समता साधना में लगाकर अर्जुनमाली का क्रोध शांत कर देता है और वे दोनों भगवान के पास पहुँच कर श्रमणदीक्षा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंगीकार कर उग्र तपश्चर्या करते हैं। जिनके नाम से एक दिन बड़े-बड़े वीरों के पांव थर्राते थे और हृदय कांपते थे, जिसने तेरह दिन में ११४१ व्यक्तियों की हत्याएँ की थीं, वही अर्जुनमाली श्रमणदीक्षा ग्रहण कर लोगों के कटुवचन तथा तिरस्कार को निर्जरा का हेतु समझकर अपनी इन्द्रियों का दमन करता है। वह निमित्त को दोषी नहीं मानते हुए, अपने कर्मों का दोष मानते हुए, समत्व भावना का चिन्तन करते हुए, भयंकर उपसर्गों को शान्त भाव से सहन करता हुआ उग्र साधना के द्वारा छह माह में ही मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

इसी वर्ग के पन्द्रहवें अध्ययन में बालमुनि अतिमुक्तक कुमार का मार्मिक वर्णन प्राप्त होता है जो साधना की दृष्टि से सभी मुनियों के लिए प्रेरणास्रोत है। इस प्रसंग से यह सिद्ध होता है कि साधना की दृष्टि से वय की प्रधानता नहीं है जो साधक वय की दृष्टि से भले ही छोटा हो, परन्तु यदि उसमें साधना की योग्यता है तो वह दीक्षित हो सकता है। इस अध्ययन में अतिमुक्तक और गौतम गणधर का समागम और भगवान महावीर से चर्चाएँ मुख्य हैं। अतिमुक्तक कुमार का उनके माता-पिता के साथ संसार की क्षणभंगुरता का प्रसंग मार्मिक है माता-पिता ने अतिमुक्तक कुमार को इस प्रकार कहा— 'हे पुत्र! तुम अभी बालक हो। असंबुद्ध हो। तुम अभी धर्म तत्त्व को क्या जानते हो? तब अतिमुक्तक कुमार ने कहा— हे माता-पिता! मैं जिसको जानता हूँ, उसको नहीं जानता हूँ और जिसको नहीं जानता हूँ उसको जानता हूँ। तब उन्होंने कहा— हे माता-पिता! मैं जानता हूँ कि जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु निश्चित है, किन्तु मैं यह नहीं जानता कि मृत्यु कब, किस समय अथवा कहाँ अर्थात् किस स्थान पर कैसी अवस्था में आयेगी। जीव किन कर्मों से नरक आदि में जन्म लेते हैं यह मैं नही जानता, किन्तु यह जानता हूँ कि कर्मबन्ध के कारणों से नारकी आदि योनियों में जन्म लेते हैं। अतः मैं संयम अंगीकार करना चाहता हूँ। भगवती सूत्र[११] में उल्लेख है कि शौच के लिए जाते समय रास्ते में पानी को देखकर अतिमुक्तक कुमार का बालकपन उभर आया और एक पात्र उस पानी में छोड़कर वे कहने लगे— "तिर मेरी नैया तिर"। परन्तु अन्य स्थविरों को उनका यह कृत्य श्रमणमर्यादा के विपरीत लगा। अतः उन्हें उपालम्भ दिया। अतिमुक्तक को इस कृत्य पर अत्यन्त पश्चात्ताप हुआ। भगवान महावीर ने स्थविरों के मन की भावना को जानकर उन्हें कहा कि अतिमुक्तक इसी भव में मोक्ष प्राप्त करेंगे। इनकी निन्दा और गर्हणा मत करो। यहाँ मुक्ति के लिए पश्चात्ताप के आदर्श मार्ग को अतिमुक्त मुनि के प्रसंग से दर्शाया है।

सप्तम वर्ग के १३ अध्ययन हैं। इन तेरह अध्ययनों में राजगृह नगर के सम्राट् राजा श्रेणिक की तेरह रानियों के बीस वर्ष तक संयम पालन कर अन्त में सिद्धत्व प्राप्ति का उल्लेख है। ये तेरह रानियाँ हैं— नंदा, नंदवती,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नंदोत्तरा, नंदश्रेणिका, मरुता, समरुता, महामरुता, मरुदेवा, भद्रा, सुभद्रा, सुजाता, सुमनायिका और भूतदत्ता। अष्टम वर्ग के १० अध्ययन हैं। इनमें राजा श्रेणिक की रानियों की कठोर तपश्चर्या का वर्णन है जो रोंगटे खड़े करने वाला है। इन महारानियों के छुट-पुट जीवन-प्रसंग अन्य आगमों में भी विस्तार से मिलते हैं। ये महारानियाँ अपने जीवन के अन्त में संलेखनापूर्वक आयु पूर्ण कर मुक्ति प्राप्त करती हैं। इस वर्ग के प्रथम अध्ययन में काली देवी के ''रत्नावली तप'' दूसरे अध्ययन में सुकाली देवी के ''कनकावली तप'' तृतीय अध्ययन में महाकाली देवी के ''लघुसिंह निष्क्रीड़ित तप'', चतुर्थ अध्ययन में कृष्णा देवी के ''महासिंहनिष्क्रीडित तप'', पंचम अध्ययन में सुकृष्णा देवी के ''सप्तसप्तमिका भिक्षुप्रतिमा तप, षष्ठ अध्ययन में महाकृष्णा देवी के ''लघुसर्वतोभद्र तप'', सप्तम अध्ययन में वीरकृष्णा देवी के ''महासर्वतोभद्र तप'', अष्टम अध्ययन में रामकृष्णा देवी के ''भद्रोत्तरप्रतिमा तप'', नवम अध्ययन में पितृसेन कृष्णा देवी के ''मुक्तावली तप'' तथा दशम अध्ययन में महासेनकृष्णा देवी के ''आयंबिल वर्द्धमान तप'' का वर्णन है जो श्रमणों के लिए अनुकरणीय है।

**1.रत्नावली तप**

एक परिपाटी— तपश्चर्या काल—१ वर्ष ३मास २२ दिन, तप के दिन—१ वर्ष २४ दिन, पारणे के दिन—८८

चार परिपाटी— तपश्चर्या काल—५ वर्ष २ मास २८ दिन, तप के दिन—४ वर्ष ३ मास ६ दिन, पारणे के दिन ३५२

**2. कनकावली तप—**

एक परिपाटी— तपश्चर्या काल- १ वर्ष ५मास १२ दिन, तप के दिन—१ वर्ष २ माह १४ दिन, पारणे के दिन ८८

चार परिपाटी— तपश्चर्या काल—५ वर्ष ९ मास १८ दिन, तप के दिन - ४ वर्ष ९ मास २६ दिन, पारणे के दिन—३५२

**3.खुड्डागसिंह निकीलियं (लघुसिंह निष्क्रीडित तप)**

एक परिपाटी—तपश्चर्या काल—६ मास ७ दिन; तप के दिन— ५ मास ४ दिन, पारणे के दिन— ३३

चार परिपाटी—तपश्चर्या काल— २ वर्ष २८ दिन, तप के दिन—१ वर्ष ८ मास १६ दिन, पारणे के दिन— १३२

**4. महासिंह निकीलियं**

एक परिपाटी—तपश्चर्या काल— १ वर्ष ६मास १८ दिन, तप के दिन— १ वर्ष ४ माह १७ दिन, पारणे के दिन - ६१

चार परिपाटी—तपश्चर्या काल—६ वर्ष २ मास १२ दिन, तप के दिन— ५ वर्ष ६ मास ८ दिन, पारणे के दिन २४४

**5. सतसतमिका भिक्खुपडिमा तप**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तपश्चर्या काल ४९ दिन, १९६ दत्तियाँ

**6. अट्ठअट्ठमिया भिक्खुपडिमा तप**

तपश्चर्या काल– ६४ दिन, २८८ दत्तियाँ

**7. नवनवमियाभिक्खुपडिमा तप**

तपश्चर्याकाल– ८१ दिवस, ४०५ दत्तियाँ

**8. दसदसमियाभिक्खुपडिमा तप**

तपश्चर्याकाल– १०० दिवस, ५५० दत्तियाँ

**9. खुओयासव्वतोभद्द पडिमा तप**

तपश्चर्याकाल– ७५ दिवस, पारणे–२९

**10. महासर्वतोभद्र पडिमा तप**

तपश्चर्याकाल–१९६ दिवस, पारणे–४९

**11. भद्रोतर प्रतिमा**

तपश्चर्याकाल– १७५ दिवस, पारणे–२९

**12. मुक्तावली**

एक परिपाटी– तपश्चर्या काल– ११मास २५ दिन, तप के दिन– २८५ दिन, पारणे के दिन– ६०

चार परिपाटी– तपश्चर्या काल– ३ वर्ष १० मास, तप के दिन– ३ वर्ष २ मास २४० दिन

**13. आयंबिल वर्धमान**

तपश्चर्याकाल– १४ वर्ष, ३ मास, २० दिन,

चार परिपाटी– ११ मास १५ दिन, तप के दिन– ३ वर्ष १० मास। बीच में कोई पारणा नहीं।

**विशिष्ट तपश्चर्या वर्णन–** प्रस्तुत ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसमें विशिष्ट तपश्चर्या का वर्णन किया गया है जिसके माध्यम से राजा श्रेणिक की रानियों ने मुक्ति प्राप्त की। यहाँ इन तपश्चर्याओं का संक्षिप्त विवरण दर्शाया गया है।

## पर्युषण में अन्तकृद्दशांग सूत्र की वाचना क्यों ?:–

दिगम्बर परम्परा में पर्युषण काल में तत्त्वार्थसूत्र के वाचन की परम्परा है। ऐसा कहा जाता है कि राजा श्रेणिक के शासनकाल में चम्पानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में सुधर्मा स्वामी ने जम्बूस्वामी को अंतगडदशासूत्र का अध्ययन कराया था। वह काल पर्युषण काल नहीं था और शास्त्रों में भी पर्युषण काल में ही इसकी वाचना का विधान प्राप्त नहीं होता, परन्तु पर्युषण काल में ही इसकी वाचना की परम्परा विद्यमान है। पर्युषण के अवसर पर कब से इसकी वाचना की परंपरा प्रारंभ हुई, यह भी एक शोध का विषय है, परन्तु ऐसा लगता है कि १५वीं शती के पश्चात् अर्थात् लोंकाशाह के पश्चात् इसके वाचन की परंपरा प्रारंभ हुई होगी। चूंकि एक ओर इसमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराजा श्रेणिक तथा श्रीकृष्ण वासुदेव की महारानियों द्वारा विशिष्ट तपश्चर्याओं के आचरण के माध्यम से मुक्तावस्था का वर्णन है तो दूसरी ओर गजसुकुमार और अतिमुक्तक कुमार जैसे श्रमणों का तेजस्वी व्यक्तित्व वर्णित है और तीसरी ओर सेठ सुदर्शन, अर्जुनमाली आदि के आख्यानों का मार्मिक वर्णन है, जो सम्पूर्ण जैन संस्कृति के लिए अनुकरणीय एवं आदर्श है। अतः पर्युषण के पावन पर्व पर स्थानकवासी परम्परा में इस आगम के वाचन की परिपाटी विद्यमान है। श्वेताम्बर-मूर्तिपूजक समाज में कल्पसूत्र के वाचन की परम्परा है। अंगसूत्रों में 'अन्तकृद्दशा' आठवाँ अंग आगम है। यह आठ वर्गों में बंटा हुआ है और पर्युषण के दिन भी आठ ही होते हैं। इसी दृष्टिकोण को सामने रखकर इसके वाचन की परिपाटी पर्युषण के दिनों में हुई होगी। वैसे इसका वाचन किसी भी दिन किया जा सकता है।

## अंतकृद्दशांग सूत्र की वृत्तियाँ एवं अनुवाद

अंतकृद्दशांग सूत्र पर संस्कृत में दो वृत्तियाँ प्राप्त होती हैं— आचार्य अभयदेव और आचार्य घासीलाल जी म.सा. की। छः हिन्दी-अनुवाद प्राप्त होते हैं। तीन-चार गुजराती अनुवाद भी प्रकाशित हुए हैं। इस तरह इस आगम के करीब तेरह संस्करण प्राप्त होते हैं। एक अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित हुआ है।

## सामाजिक एवं सांस्कृतिक वैशिष्ट्य

अन्तगडदशासूत्र में कांकदी, गुणशील उद्यान, चम्पानगरी, जम्बूद्वीप, द्वारिका, दूतिपलाश चैत्य, पूर्णभद्र चैत्य, भद्दिलपुर, भरतक्षेत्र, राजगृह, रैवतक, विपुलगिरि पर्वत, सहस्राम्रवन उद्यान, साकेत तथा श्रावस्ती के परिचय के साथ ही इसमें ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र और क्षत्रिय जातियों का परिचय भी प्राप्त होता है। ब्राह्मण वर्ण के व्यक्ति विशेष में सोमश्री, सोमा और सोमिल ब्राह्मण का उल्लेख हुआ है। वैश्य वर्ण के व्यक्ति गाथापति में काश्यप, किंकर्मा, कैलाशजी, द्वैपायनऋषि, धृतिधरजी, नागगाथापति, पूर्णभद्र, मंकातिगाथापति, मेघकुमार वास्तक, सुदर्शन सेठ (प्रथम एवं द्वितीय), सुप्रतिष्ठित, सुमनभद्र, सुलसा, हरिचन्दन और क्षेमकगाथापति। शूद्र वर्ग में अर्जुनमाली और उसकी पत्नी बंधुमती तथा क्षत्रिय वर्ग में राजाओं की दृष्टि में अंधकवृष्णि, अलक्षराजा, श्रीकृष्ण वासुदेव, कोणिकराजा, जितशत्रु, प्रद्युम्न, विजयराजा, वासुदेवराजा, बलदेव, समुद्रविजय तथा श्रेणिक राजा, रानियों में काली, कृष्णा, गांधारी, गौरी, चेल्लणा, जाम्बवती, देवकी, धारिणी, नन्दश्रेणिका, नन्दा, नन्दवती, नन्दोत्तरा, पद्मावती, पितृसेनकृष्णा, बलदेवपत्नी भद्रा, मरुतदेवी, मरुतादेवी, महाकाली, भद्रकृष्णा, महामरुता, महासेनकृष्णा, मूलदत्ता, मूलश्री, रामकृष्णा, रूक्मिणी, लक्ष्मणा, वसुदेव-पत्नी, वीरकृष्णा, वैदर्भी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्यभामा, सुकालिका, सुकृष्णा, सुजाता, सुभद्रा, सुमनतिका, सुमरूत्त, सुसीमा और श्रीदेवी। राजकुमारों में अचल, अतिमुक्त, अनंतसेन, अनादृष्टि, अनियस, अनिरुद्ध, अनिहत, अभिचन्द्र, अक्षोभकुमार, उवयालि, कांपिल्य, कूपक, गजसुकुमार, गंभीर, गौतम, जालि, दृढनेमि, दारुक, दुर्मुख, देवयश, धरण, प्रद्युम्न, प्रसेनजीत, पुरुषषेण, पूर्णकुमार, मयालि, वारिषेण, विदु, विष्णु, सत्यनेमि, समुद्र, सागर, सारण, स्तिमिता, सुमुख, शत्रुसेन, शांब और हेमवन्त कुमार का वर्णन मिलता है।

## अंतगडदशासूत्र की कतिपय विशेषताएँ

१. चरित्र एवं पौराणिक काव्यों के लिए इसमें बीजभूत आख्यान समाविष्ट हैं।

२. राजकीय परिवार के स्त्री-पुरुषों को संयम धारण करते हुए देखकर आध्यात्मिक साधना के लिए प्रेरणा प्राप्त होती है।

३. कृष्ण और कृष्ण की आठ पत्नियों का आख्यान—सम्यक्त्वकौमुदी की कथाओं का स्रोत है। जम्बूस्वामी की आठ पत्नियाँ एवं उनको सम्यक्त्व प्राप्ति की कथाएँ भी इन्हीं बीजों से अंकुरित हुई हैं।

४. कथानकों के बीजभाव काव्य और कथाओं के विकास में उपादान रूप में व्यवहृत हुए हैं। एक प्रकार से उत्तरवर्ती साहित्य के विकास के लिए इन्हें 'जर्मिनल आइडिया' कहा जा सकता है।

५. द्वारिका नगरी के विध्वंस का आख्यान -जिसका विकास परवर्ती साहित्य में खूब हुआ है।

६. ललित गोष्ठियों (मित्र मण्डलियों) के अनेक रूप—अर्जुनमाली के आख्यान से प्रकट हैं।

७. प्राचीन मान्यताओं और अन्धविश्वासों का प्रतिपादन यक्षपूजा, मनुष्य के शरीर में यक्ष का प्रवेश आदि के द्वारा किया गया है।

८. अहिंसक के समक्ष हिंसावृत्ति का काफूर होना और अहिंसा वृत्ति में परिणत होना—अर्जुन लौह मुद्गर से नगरवासियों का विध्वंस करता है, किन्तु भगवान महावीर के समक्ष जाकर वह नतमस्तक हो जाता है और प्रव्रज्या ग्रहण कर लेता है।

९. नगर, पर्वत –रैवतक, आयतन-सुरप्रिय, यक्षायतन आदि का वर्णन काव्यग्रंथों के लिए उपकरण बना।

१०. देवकी के पुत्र गजसुकुमार के दीक्षित हो जाने पर सोमिल ने ध्यानस्थ दशा में उसे जला दिया। अत्यन्त वेदना होने पर भी वह शांत भाव से कष्ट सहन करता रहा, यह आख्यान साहित्य-निर्माताओं को इतना प्रिय हुआ, जिससे 'गजसुकुमार' नामक स्वतन्त्र काव्यग्रंथ लिखे गये।[६२]

इस प्रकार अन्तगडदशांग अंग-आगमों में अपना विशिष्ट स्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रखता है। इस श्रुतांग के आख्यानों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। आदि के पाँच वर्गों के कथानकों का संबंध अरिष्टनेमि के साथ है और शेष तीन वर्ग के कथानकों का संबंध महावीर तथा श्रेणिक के साथ है।

प्रस्तुत आगम में विविध कथाओं के माध्यम से सरल एवं मार्मिक तरीके से विविध तपश्चर्याओं का विवेचन किया गया है और यह प्रतिपादित किया गया है कि किस प्रकार व्यक्ति अपनी आत्म-साधना के द्वारा जीवन के अन्तिम लक्ष्य ''मुक्ति'' को प्राप्त करता है।

## सन्दर्भ


१. विधिमार्गप्रपा– पृष्ठ ५५
२. समवायांग प्रकीर्णक, समवाय, ८९
३. नन्दीसूत्र ८८
४. समवायांग वृत्ति पत्र, ११२
५. वही, पत्र, ११२
६. नन्दीसूत्र चूर्णिसहित पत्र ६८
७. वही, पत्र ७३
८. वही, पत्र, ६८
९. स्थानांग सूत्र १०/११३
१०. तत्त्वार्थराजवार्तिक १/२०, पृ. ७३
११. अंगपण्णत्ति, ५१
१२. कसायपाहुड, भाग १, पृ. १३०
१३. ''ततो वाचनान्तराक्षाणीमानीति सम्भावामः।'' स्थानांगवृत्ति पत्र ४८३
१४. अन्तकृद्दशा मधुकर मुनि, भूमिका पृ. २४
१५. द्रोणसूरि, ओघनिर्युक्ति, पृ. ३
१६. सुत्तं गणधरकथिदं, तहेव पत्तेयबुद्धकथिदं च।
सुदकेवलिणा कथिदं अभिण्णदेसपुव्विकाथदं च।– मूलाचार ५/८०
१७. (क) सूत्रकृतांग–शीलांकाचार्य वृत्ति, पत्र ३३६
(ख) स्थानांग सूत्र, अभयदेव वृत्ति प्रारंभ।
(ग) दशवैकालिकसूत्र चूर्णि, पृ. २९
(घ) निशीथभाष्य–४००४
१८. (क) वलहिपुराभिनयरे, देवड्ढिपमुहेण समणसंघेण।
पुत्थई आगमु हिको नवसय असीआओ वीराओ
अर्थात् ईस्वी ४५३, मतान्तर से ई.४६६ एक प्राचीन गाथा।
(ख) कल्पसूत्र–देवेन्द्रमुनि शास्त्री, महावीर अधिकार।
१९. ''भगवं च णं अद्धमागहीए भासाए धम्ममाइक्खई। सावि य णं अद्धमागही भासा भासिज्जमाणी तेसिं सव्वेसिं आरियमणा-रियाणंदुप्पय चउप्पय–मिय–पसु–पक्खि–सरीसिवाणं अप्पणो हिय–सिव सुहयभासत्ताए परिणमई।''–समवायांग सूत्र –३४,२२,२३
२०. बालस्त्रीवृद्धमूर्खाणां नृणां चारित्रकांक्षिणाम्।
अनुग्रहार्थ तत्त्वज्ञैः सिद्धान्तः प्राकृतः कृतः।। –दशवैकालिक वृत्ति, पृष्ठ २२३
२१. प्राकृत भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास– नेमिचन्द शास्त्री, पृ.


Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७५—१७६
२२. महाभारत शान्तिपर्व अ. ४८
२३. श्रीमद्भगवद्गीता।
२४. महाभारत—अनुशासन पर्व १४७/१८—२०
२५. शतपथब्राह्मण, १३/३/४
२६. तैत्तरीयारण्यक, १०/११
२७. महाभारत—वनपर्व १६—४७, उद्योग पर्व ४८.१
२८. छान्दोग्योपनिषद् अ.३ खण्ड १७, २ श्लोक ६, गीताप्रेस गोरखपुर।
२९. श्रीमद्भागवत—दशम स्कन्ध ८—४८, ३/१३/२४—२५
३०. भगवान अरिष्टनेमि और कर्मयोगी श्रीकृष्ण— एक अनुशीलन, पृष्ठ १७६ से १८६
३१. जातककथाएँ, चतुर्थ खण्ड ४५४ में घटजातक—भदन्त आनन्द कौशल्यायन।
३२. समवायांग, १५८
३३. आवश्यकनिर्युक्ति, गाथा ४१५
३४. अन्तकृद्दशा, वर्ग १ से ३ तक
३५. (क) ऋग्वेद १/१४/९५/६
(ख) ऋग्वेद १/२४/१८०/१०
(ग) ऋग्वेद ३/४/५३/१७
(घ) ऋग्वेद १०/१२/१७८/१
३६. ऋग्वेद १/१४/८९/९, १/१/१६, १/१२/१७८/१
३७. यजुर्वेद २५/१८
३८. सामवेद ३/८
३९. महाभारत शान्ति पर्व— २८८/४
४०. महाभारत शान्ति पर्व— २८८/५/६
४१. वाज्सनेयि माध्यन्दिन शुक्लयजुर्वेद, अध्याय ८ मंत्र २५, सातवलेकर संस्करण (विक्रम १९९४)
४२. Indian Philosophy संस्करण(विक्रम १८९४)
४३. स्कन्धपुराण प्रभास खण्ड
४४. प्रभास पुराण ४८/५०
४५. मोक्षमार्ग प्रकाश, पण्डित टोडरमल।
४६. बौद्ध धर्म दर्शन, आचार्य नरेन्द्रदेव पृ. १६२
४७. अन्नल्स ऑफ दी भण्डारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पत्रिका २३, पृ. १२२।
४८. भारतीय संस्कृति और अहिंसा पृ. ५७
४९. तद्धैतद् घोर अंगिरस: कृष्णाय देवकीपुत्राय : — छान्दोग्योपनिषद् प्र.३, खण्ड १८१
५०. अन्तकृद्दशासूत्र वर्ग ५, अध्ययन १
५१. भगवती शतक ५, उद्देशक ४
५२. डॉ. नेमिचन्द शास्त्री—प्राकृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ. १७६

—ओ.टी.सी. स्कीम, उदयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org